तात्पर्य

जन्म, मृत्यु जरा और व्याधि आदि विकार जड़ देह को पीड़ित करते हैं; परन्तु दिव्य देह में ऐसा नहीं है। दिव्य देह इन चारों विकारों के बिल्कुल मुक्त है। अतः सिद्ध दिव्य देह को प्राप्त होकर जो जीव भगवान् का पार्षद बन जाता है और शाश्वत् भक्तियोग का आचरण करता है, वह यथार्थ में मुक्त है। **अहं ब्रह्मास्मिः**, 'मैं आत्मतत्त्व हूँ।' शास्त्रों का निर्देश है कि अपने को ब्रह्म, अर्थात् आत्मतत्त्व समझे। यह ब्राह्मी धारणा भी भक्तियोग है, जैसा इस श्लोक में कहा गया है। शुद्धभक्त ब्रह्मभूत हो जाते हैं; उन्हें प्राकृत-अप्राकृत क्रियाओं का पूर्णज्ञान रहता है।

भगवत्सेवा-परायण चारों प्रकार के अशुद्ध भक्तों की अभीष्ट-सिद्धि हो जाती है और अहैतुकी भगवत्कृपा से पूर्ण कृष्णभावनाभावित हो जाने पर वे भी भगवान् के संग का आस्वादन करते हैं। परन्तु देवोपासकों को परम धाम में श्रीभगवान् का संग कभी नहीं मिलता। अल्पज्ञ ब्रह्मज्ञानी भी श्रीकृष्ण के परम धाम गोलोक-वृन्दावन में प्रवेश के अधिकारी नहीं हैं। एकमात्र कृष्णभावनाभावित क्रिया करने वालों **(माम् आश्रित्य)** को ही यथार्थ में 'ब्रह्म' कहा जा सकता है, क्योंकि श्रीकृष्णलोक की प्राप्ति के लिए वास्तव में वे ही यत्नशील हैं। इन भक्तों को श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं रहता। अतः वे वस्तुतः **ब्रह्म हैं**।

बन्धन-मुक्ति के लिए जो भगवत्-अर्चा-भक्ति अथवा भगवत् ध्यान करते हैं, वे श्रीभगवान् के अनुग्रह से ब्रह्म, अधिभूत आदि के तत्त्व को जान जाते हैं। अगले अध्याय में श्रीभगवान् ने यह सब वर्णन किया है।

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः।
प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः ।।३०।।

साधिभूत=प्राकृत सृष्टि के तत्त्व सहित; **अधिदैवम्**=देवताओं के आधार; **माम्**=मुझ को; **साधियज्ञम्**=सम्पूर्ण यज्ञों को धारण करने वाला; **च**=तथा; **ये**=जो; **विदुः**=जानते हैं; **प्रयाण**=मृत्यु के; **काले**=काल में; **अपि**=भी; **च**=तथा; **माम्**=मुझको; **ते**=वे; **विदुः**=जानते हैं; **युक्तचेतसः**=स्थिरचित्त पुरुष।

अनुवाद

जो परमेश्वर, अधिभूत, अधिदैव तथा अधियज्ञ के रूप में मेरे तत्त्व को जानते हैं, वे स्थिरचित्त से अन्तकाल में भी मुझ को जान सकते हैं।।३०।।

तात्पर्य

कृष्णभावनाभावित कर्म करने वाले पुरुष भगवान् के तत्त्वज्ञान के पथ से पूर्ण रूप से कभी नहीं भटक सकते। कृष्णभावनामृत के अलौकिक सत्संग में यह बोध हो जाता है कि श्रीभगवान् ही अधिभूत एवं अधिदैव हैं। ऐसे दिव्य समागम से शनैः-शनैः भगवान् में विश्वास बढ़ता जाता है। इसलिए कृष्णभावनाभावित पुरुष अन्तकाल में भी श्रीकृष्ण को नहीं भूलता। अतएव वह सहज ही भगवद्धाम